श्री शिव महिमा स्तोत्र

www.anipdf.com

॥ प्रारंभ॥

महिम्नः पारन्ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
ममाप्येषस्तोत्रे हर! निरपवादः परिकरः।।1।।

भावार्थः- हे हर! यदि आपकी अपार महिमा का पार न पाने वालों के द्वारा की गई आपकी स्तुति अनुचित है तो ब्रह्मादि की भी वाणी आपकी महिमा के वर्णन योग्य नहीं है, अत: अपनी अपनी मति के अनुसार आपका गुणगान करने वाले किसी को भी बुरा नहीं कहना चाहिए। इसलिए मैं भी आपकी स्तुति करने का प्रयास कर रहा हूँ।

अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयो
रतव्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि।
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः
पदेत्वर्वाचीने पततिन मनःकस्य न वचः।।2।।

भावार्थः- आप की महिमा वाणी और मन से परे है। वेद भी आश्चर्यचकित होकर 'नेति' 'नेति' कहते हैं, उसकी स्तुति कौन कर सकता है? उसके गुण कैसे हैं? वह कैसे समझा जा सकता है। (अर्थात् आपका वर्णन कोई नहीं कर सकता।) आपके नवीन साकार रूप में किसका मन नहीं आकृष्ट होता? किसकी वाणी आकृष्ट नहीं होती?

www.anipdf.com

मधुस्फीता वाचः परमममृतं निर्मितवत
स्तव ब्राह्मंकिम्वागपि सुर गुरोर्विस्मय पदम्।
मम त्वेतां वाणी गुण कथन पुण्येन भवतः
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन्पुरमथनबुद्धिर्व्यवसिता।।3।।

भावार्थः- हे ब्रह्मस्वरूप! आप अत्यन्त माधुर्ययुक्त अमृतरूपी वेदवाणी के निर्माता हैं! क्या आपको सुरगुरु बृहस्पति की भी वाणी विस्मित कर सकती है? हे पुरमथन, मैंने तो अपनी इस वाणी को आपके गुणकथन के पुण्य से पवित्र करने के लिए बुद्धि लगाई है।

तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदय रक्षा प्रलयकृत्
त्रयीवस्तु व्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु।
अभव्यानामस्मिन् वरद रमणीयामरमणीं
विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जडधियः।।4।।

भावार्थः- हे वर देने वाले प्रभो! सृष्टि की उत्पत्ति, पालन व संहार करने वाला, वेदों द्वारा प्रतिपाद्य, सत्त्व-रजस् तम गुणों के भेद से ब्रह्मा-विष्णु-शंकर रूप तीन शरीरों में व्याप्त जो यह आपका ऐश्वर्य है, उसका खण्डन करने के लिए कुछ कुण्ठित बुद्धि के नास्तिक लोग आपके ऐश्वर्य के विषय में मन्दबुद्धि लोगों को प्रिय लगने वाले अनुचित शब्द-प्रयोग करते रहते हैं।

www.anipdf.com

किमीहः किङ्कायः सखलु किमुपायस्त्रि भुवनम्
किमाधारोधातासृजति किमुपादान इति च।
अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः
कुतर्कोऽयं कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः।।5।।

भावार्थः- वह ब्रह्मा किस इच्छा के वशीभूत होकर किस शरीर से, किस विधि से, किस आधार में अधिष्ठित होकर व किस समवायिकारण से तीनों लोकों की उत्पत्ति करता है – इस प्रकार का कुतर्क कल्पनातीत ऐश्वर्य वाले आपके विषय में रहस्य न पाकर अस्थिर होते हुए भी संसार को भ्रम में डालने के लिए कुछ बुद्धिहीन लोगों को वाचाल बनाता है।

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगता
मधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति।
अनीशो वा कुर्याद् भुवनजनने कः परिकरो
यतो मन्दास्त्वां प्रत्यमरवर संशेरत इमे।।6।।

भावार्थः- हे देवों में श्रेष्ठ! ये पृथ्वी आदि लोक अवयवी होने पर भी क्या जन्म-रहित हो सकते हैं? क्या सृष्टि की उत्पत्ति कर्ता के विना हो सकती है? ईश्वर से भिन्न यदि कोई मनुष्य, आदि इसका कर्ता है तो भू आदि लोगों की रचना करने के लिए उसके पास क्या सामग्री है? क्योंकि वे मन्दबुद्धि हैं इसलिए आपके विषय में संशय किया करते हैं।

www.anipdf.com

त्रयी साङ्ख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च।
रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषा
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव।।7।।

भावार्थः- वेद, सांख्यशास्त्र, योगशास्त्र, शैवशास्त्र, वैष्णवशास्त्र इत्यादि विभिन्न मार्गों में "यह (हमारा) मत श्रेष्ठ है, वह (दूसरे का) मत श्रेष्ठ नहीं" इस प्रकार की रुचियों में भेद होने से सीधे-टेढ़े, अनेक मार्गों के अनुसार चलनेवाले मनुष्यों द्वारा प्राप्त करने योग्य वैसे ही आप एक हैं जैसे नदियों द्वारा प्राप्त करने योग्य समुद्र ।

महोक्षः खट्वाङ्गं परशुरजिनं भस्म फणिनः
कपालं चेतीयत्तव वरद तन्त्रोपकरणम्।
सुरास्तां तामृद्धिं दधति तु भवद्भूप्रणिहितां
न हि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति।।8।।

भावार्थः- हे प्रभो! बैल, खाट का पाया, फरसा, मृगचर्म, भस्म, सर्प और खप्पर यही सब आपके व्यवहारोपयोगी साधन हैं। परन्तु (आप दाता हैं, अतः) देवता लोग भिन्न-भिन्न ऋद्धियों को आपकी कृपा कटाक्ष से धारण करते हैं। (आप स्वयं उपभोग नहीं करते) क्योंकि आत्मा में रमण करने वाले को सांसारिक विषयों की मृगतृष्णा भ्रम में नहीं डाल सकती ।

www.anipdf.com

ध्रुवं कश्चित्सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदं
परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये।
समस्तेऽप्येतस्मिन्पुरमथन तैर्विस्मित इव
स्तुवजिह्वेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता।।9।।

भावार्थः- हे त्रिपुरासुर का विनाश करने वाले! कोई इस सम्पूर्ण जगत् को नित्य बताता है, अन्य कोई इसे अनित्य बताता है, तथा अन्य कोई जगत् में नित्य और अनित्य दोनों प्रकार के पदार्थ मानते हैं। ऐसा होने पर आश्चर्य में पड़ा हुआ सा भी आपकी स्तुति करता हुआ, मैं लज्जित नहीं हो रहा हूँ। वस्तुतः वाचालता ही ढीठ होती है।

तवैश्वर्यं यत्नाद्यदुपरि विरञ्चिहरिरधः
परिच्छेत्तुं यातावनलमनलस्कन्धवपुषः।
ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरिश यत्
स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति।।10।।

भावार्थः- हे कैलासवासी ! अग्निस्तम्भ के समान आपकी तेजोमयी मूर्ति का जो पार पाने के लिए ब्रह्माजी ऊपर की ओर, विष्णुजी नीचे की ओर प्रयत्नपूर्वक गये, वह पार न पा सके। बाद में भक्ति और श्रद्धा से अवनत होकर स्तुति करते हुए उन दोनों के समक्ष आप स्थिर हो गए। आपके अनुसरण से क्या फल नहीं मिलता ?

www.anipdf.com

अयत्नादापाद्य – त्रिभुवनमवैर – व्यतिकरं
दशास्यो यद्बाहूनभृत रणकण्डूपरवशान्।
शिरः पद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबले:
स्थिरायास्त्वद्भक्तस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम्।।11।।

भावार्थः- हे त्रिपुर-संहारक! अपने मस्तकरूपी कमलों की पंक्ति को आपके चरणकमलों में समर्पित करके की गई आपकी निश्चल भक्ति का यह प्रताप है कि दशग्रीव रावण ने तीनों लोकों को अनायास ही पूर्णतया निर्वैर बनाकर युद्ध के लिए खुजलाने वाली भुजाओं को धारण किया।

अमुष्य त्वत्सेवासमधिगतसारं भुजवनं
बलात्कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ विक्रमयतः।
अलभ्या पातालेऽप्यलसचलितागुष्ठशिरसि
प्रतिष्ठा त्वय्यासीद् ध्रुवमुपचितो मुह्यति खलः।।12।।

भावार्थः- आपकी सेवा से प्राप्त शक्तिवाली अपनी भुजाओं से आपके निवासस्थान कैलासपर्वत पर भी हठपूर्वक पराक्रम दिखाने वाले उस रावण को आपके द्वारा अंगूठे के अग्रभाग से हल्का सा दबाये जाने पर पाताल में भी शरण नहीं मिली; क्योंकि समृद्धि प्राप्त करके दुष्ट अवश्य ही मोह में फंस जाता है।

www.anipdf.com

यद्दद्धिं सुत्राम्णो वरद! परमोच्चैरपि
सतीमधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रिभुवनः ।
न तच्चित्रं तस्मिन् वरिवसितरि त्वच्चरणयोर्न
कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः||13||

भावार्थः- हे वरद ! त्रिलोक को सेवक की तरह वश में रखने वाले बाणासुर ने इन्द्र की बहुत अधिक बढ़ी हुई सम्पत्ति को भी जो नीचा दिखा दिया, वह आपके चरणों में सिर झुकाने वाले उसके लिए आश्चर्य की बात नहीं थी। आपके आगे मस्तक को झुकाना किसकी उन्नति के लिए नहीं होता?

अकाण्डब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपा
विधेयस्याऽऽसीद्यस्त्रिनयन विषं संहृतवतः।
स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो
विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभङ्गव्यसनिनः||14||

भावार्थः- हे त्र्यम्बक! सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के अचानक संहार से भयभीत हुए देव और दानवों पर दया के वशीभूत होकर विष का पान करने से आपका गला काला पड़ गया है। वह क्या आपकी शोभा को नहीं बढ़ाता है? अर्थात् बढ़ाता है। वस्तुतः ब्रह्माण्ड के भय को दूर करने में संलग्न सज्जन का विकार भी प्रशंसनीय होता है।

www.anipdf.com

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे
निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः।
स पश्यन्नीश त्वामितरसुरसाधारणमभूत् स्मरः
स्मर्तव्यात्मा नहि वशिषु पथ्यः परिभवः।।15।।

भावार्थः- हे महेश! सदा विजय प्राप्त करने वाले जिस कामदेव के तीखे बाण देव-असुर-मानव से परिपूर्ण जगत् में कहीं से भी सदा कार्य किए बिना नहीं लौटते, वह कामदेव आपको अन्य देवताओं की तरह साधारण देव समझता हुआ नाममात्र का हो गया, अर्थात् मारा गया। निश्चित है कि जितेन्द्रियों का अपमान कल्याणकारी नहीं होता ।

मही पादाघाताद् व्रजति सहसा संशयपदं
पदं विष्णोर्भाम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम्।
मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा
जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता।।16।।

भावार्थः- यद्यपि आप जगत् की रक्षा के लिए नृत्य (ताण्डव) करते हैं, तथापि पृथ्वी नृत्यकाल में होने वाले पाद के आघात से अचानक सन्देह को प्राप्त हो जाती है (कि नीचे न धंस जाऊँ), विष्णु भगवान् का पद अर्थात् आकाश घूमती हुई भुजाओं की चोट से इधर-उधर उछलते हुए ग्रहों वाला हो जाता है, खुली हुई जटाओं के झटके खाये हुए किनारों वाला स्वर्ग दुरवस्था को प्राप्त हो जाता है, क्योंकि वैभव विपरीत ही हुआ करता है।

www.anipdf.com

वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते।
जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमित्य
नेनैवोन्नेयं धतमहिम दिव्यं तव वपुः।।17।।

भावार्थः- पूरे आकाश में व्याप्त तथा तारागणों की चमक से बढ़ी हुई चमकवाली फेन से युक्त जल (आकाशगंगा) का जो प्रवाह आपके शिर में छोटी सी बूंद के समान दिखाई पड़ता है, उसी जलप्रवाह ने पृथ्वी को समुद्र से घेर कर द्वीप के आकार का बना दिया। इसी से ही आपका अलौकिक शरीर महिमा को धारण करने वाला है, यह सिद्ध है।

रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो
रथाङ्गे चन्द्राकौ रथचरणपाणिः शर इति।
दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधि
विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः।।18।।

भावार्थः- पृथ्वी को रथ, ब्रह्मा को सारथि, सुमेरु पर्वत को धनुष, सूर्य व चन्द्रमा को रथ के दो पहिये तथा चक्रपाणि भगवान् विष्णु को बाण बनाकर तृण के समान त्रिपुरासुर को जलाने के इच्छुक आप शंकर की यह आडम्बर रचना किसलिए थी? वास्तविकता यह है कि अपने अधीन पदार्थों से (निष्प्रयोजन) खेलती हुई प्रभु की बुद्धियाँ पराधीन नहीं कही जा सकी ।

www.anipdf.com

हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदयो
र्यदेकोने तस्मिन्निजमुदहरन्नेत्रकमलम् ।
गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा
त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्ति जगताम्।।19।।

भावार्थः- हे त्रिपुरहर ! विष्णु भगवान् ने आपके चरणों में एक हजार कमलपुष्पों का उपहार भेंट करने का नियम बनाया और एक दिन उन कमलपुष्पों में से एक कम हो जाने पर अपने नेत्र कमल को निकालकर जो भेंट किया, वही भक्ति का आवेग सुदर्शनचक्र के रूप में परिवर्तित होकर तीनों लोकों की रक्षा के लिए सदा सावधान रहता है।

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां
क्व कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते।
अतस्त्वां सम्प्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवम्
श्रुतौ श्रद्धां बद्ध्वा दृढपरिकरः कर्मसु जनः।।20।।

भावार्थः- यज्ञादि कर्म करनेवालों के यज्ञादि क्रियाकलाप के नष्ट हो जाने पर भी फल देने के लिए आप जागते रहते हैं। नष्ट हुआ कर्म चेतनपुरुष (शिव) की आराधना के बिना क्या फल दे सकता है? अर्थात् नहीं दे सकता। भाव यह है कि कर्म स्वयं या उससे उत्पन्न जड़ अदृष्ट बिना चेतन के फल नहीं दे सकता। इसीलिए आपको यज्ञादि कर्म के फल देने का उत्तरदायी देखकर मनुष्य वेदों में श्रद्धा को दढ बनाकर कर्मों में दृढ़ता से तत्पर रहते हैं।

www.anipdf.com

क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता –
मुषीणामात्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगणाः।
क्रतुभ्रंशस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो
ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः।।21।।

भावार्थः- हे शरणद ! जिस यज्ञ में कर्मकाण्ड में निपुण देहधारियों का स्वामी राजा दक्ष प्रजापति स्वयं यजमान था, त्रिकालदर्शी ऋषि ऋत्विज् थे और देवगण सदस्य थे, यज्ञादिकर्मों का फल देने के स्वभाव वाले आपके द्वारा वह यज्ञ विनष्ट हो गया। निश्चय ही, कर्ता की श्रद्धा के बिना किए गए यज्ञ विपरीत फल देते हैं।

प्रजानाथं नाथ प्रसभमभिकं स्वां दुहितरं
गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा।
धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममुम्
वसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मगव्याधरभसः।।22।।

भावार्थः- हे नाथ! अपनी पुत्री के मृगी बन जाने पर मृग का शरीर धारण कर बलपूर्वक उससे रमण करने की इच्छा वाले कामुक ब्रह्मा पर आपने धनुष धारण कर निपुण शिकारी की तरह अचूक बाण छोड़ा। मृगशिरा नक्षत्र बनकर आकाश में गये भयभीत ब्रह्मा को वह बाण आर्द्रा नक्षत्र बनकर आज भी नहीं छोड़ता।

www.anipdf.com

स्वलावण्याशंसाधृतधनुषमह्नाय तृणवत्
पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन पुष्पायुधमपि।
यदि स्त्रैणं देवी यमनिरत देहार्धघटना
दवैति त्वामद्धा बत वरद मुग्धा युवतयः।।23।।

भावार्थः- हे त्रिपुरमथन ! हे योगिन्! पार्वती के सौन्दर्य से आपको वश में करने की आशा से धनुष उठाये हुए कामदेव को अपने सामने तिनके की तरह तुरन्त जलता हुआ देखकर भी जगदम्बा पार्वती अर्द्धनारीश्वर रूप में धारण करने से यदि आपको स्त्री में आसक्त मानती हैं, तो हे वरद! यह ठीक है, क्योंकि युवतियाँ भोली होती हैं।

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचरा
श्चिताभस्मालेपः स्रगपि न्रिकरोटीपरिकरः।
अमाङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलम्
तथापि स्मर्तॄणां वरद परमं मङ्गलमसि।।24।।

भावार्थः- हे कामनाशक! श्मशानों में आपका विहार होता है, भूतप्रेत आपके साथी हैं, चिता की राख आपके शरीर का लेप है, और मनुष्यों की खोपड़ियों की माला पहनते हैं। हे वरद ! इस प्रकार आपके सारे आचरण अमाङ्गलिक होते हुए भी स्मरण करने वालों के लिए आप परम कल्याणकारी हैं।

www.anipdf.com

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्सङ्गितदशः।
यदालोक्यालादं ह्रद इव निमज्ज्यामृतमये
दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान्।।25।।

भावार्थः- योगिगण विधिपूर्वक प्राणायाम करते हुए मन को अन्तरात्मा में एकाग्र कर जिस किसी भी तत्त्व का दर्शन करके रोमाञ्चित व हर्षाश्रुपूरितनेत्रों वाले होकर अमृतमय सरोवर में निमग्न हुए से अपने अन्दर ही परमसुख को प्राप्त करते हैं, वह आप ही हैं।

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवह
स्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च।
परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता बिभ्रतु गिरं न
विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि ।।26।।

भावार्थः- आप सूर्य हैं, आप चन्द्रमा हैं, आप वायु हैं, आप अग्नि हैं, आप जल हैं, आप आकाश हैं, आप पृथ्वी हैं और आप ही आत्मा हैं –इस प्रकार विद्वान् लोग आपके बारे में सीमित वाणी बोलते रहें लेकिन हम जगत् में ऐसा कोई पदार्थ नहीं जानते जो आप न हों। अर्थात् आप अपरिच्छिन्न हैं

www.anipdf.com

त्रयीं तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरा नकाराद्यैर्वर्णै
स्त्रिभिरभिदधत्तीर्णविकृति।
तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः
समस्तं व्यस्तं त्वां शरणद गृणात्योमितिपदम्।।27।।

भावार्थः- हे शरणदाता ! तीनों वेदों (ऋक् यजुः, साम,) तीन अवस्थाओं (जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति), तीनों भुवनों (भूः,भुवः, स्वः) और तीनों देवों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) को अ-उ-म् इन तीन वर्षों से (सर्व विकारातीत अवस्थात्रय से परे) बोध कराने वाला 'ॐ' यह पद समस्त रूप में भी और व्यस्त रूप में भी आप ही को प्रतिपादित करता है।

भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सह महां
स्तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम्।
अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देव! श्रुतिरपि
प्रियायास्मै धाम्ने प्रणिहितनमस्योऽस्मि भवते।।28।।

भावार्थः- हे देव! भव, शर्व, रुद्र, पशुपति, उग्र, महादेव, भीम तथा ईशान ये जो आपके आठ नाम हैं, उनमें से एक-एक का क्रमशः वेदशास्त्र भी (स्मृति, पुराण, आदि तो करते ही हैं) विशेष बोध कराते हैं। उस परमानन्दस्वरूप स्वप्रकाशस्वरूप आपको विधिपूर्वक नमस्कार करता हूँ।

www.anipdf.com

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो
नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः।
नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो
नमः सर्वस्मै ते तदिदमिति शर्वाय च नमः।।29।।

भावार्थः- हे वनों से प्रेम करने वाले समीपातिसमीप और दूरातिदूर आपको बारम्बार नमस्कार है। हे कामान्तक ! सूक्ष्मातिसूक्ष्म और महत्तम आपको बारम्बार नमस्कार है। हे त्रिनेत्र ! वृद्धातिवृद्ध और युवकातियुवक आपको बारम्बार नमस्कार है। हे सर्वरूप! अखिल जगत् के अधिष्ठान आपको बारम्बार नमस्कार है।

बहुलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः
प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः।
जनसुखकृते सत्त्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः
प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः।।30।।

भावार्थः- सृष्टि की उत्पत्ति के लिए रजोगुण-प्रधान ब्रह्मारूप आपको बारम्बार नमस्कार है। सृष्टि का संहार करने के लिए तमोगुणप्रधान रुद्ररूप आपको बारम्बार नमस्कार है। लोगों को सुख देने के लिए सत्त्व प्रधान सुखमय आप को बारम्बार नमस्कार है। मायारहित ज्योतिर्मय त्रिगुणातीत मोक्षपद की प्राप्ति के लिए कल्याणरूप आपको बारम्बार नमस्कार है।

www.anipdf.com

कृशपरिणति चेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं
क्व च तव गुणसीमोल्लङ्घिनी शश्वदृद्धिः।
इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधा
द्वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम्।।31।।

भावार्थः- हे वरद ! अल्प परिणाम वाला क्लेशों के अधीन यह मेरा चित्त कहाँ और गुणों की सीमा से अधिक तथा नित्य आपकी विभूति कहाँ, इस प्रकार आश्चर्य में पड़े (असमर्थ) मुझको योग्य बनाकर आपके चरणों की भक्ति ने, आपके चरणों में वाक्यरूपपुष्पों की भेंट अर्पित कराई

असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे
सुरतरु-वर-शाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति।।32।।

भावार्थः- हे प्रभो! यदि समुद्ररूप दवात में काला पर्वत स्याही बने, कल्पवृक्ष की मोटी-मोटी शाखाएँ कलम बनें और पृथ्वी कागज बने तथा साक्षात् सरस्वती इन सबको लेकर निरन्तर लिखती रहें तो भी आपके गुणों का पार नहीं पाया जा सकता।

www.anipdf.com

असुर-सुर-मुनीन्द्ररर्चितस्येन्दुमौले
ग्रंथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य।
सकलगणवरिष्ठः पुष्पदन्ताभिधानो
रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार।।33।।

भावार्थः- राक्षसों, देवताओं व मुनीन्द्रों द्वारा पूजित, मस्तक पर चन्द्रमा धारण किये हुए, गुणगणमहिमा से युक्त, निर्गुण आप महादेव भगवान् का यह मनोहारी स्तोत्र पुष्पदन्तनामक सर्व-गन्धर्वगणोंमें श्रेष्ठ गन्धर्वराज ने बड़े श्लोकों से किया।

अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत्
पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान्यः ।
स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथाऽत्र
प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान्कीर्तिमांश्च।।34।।

भावार्थः- पवित्र हृदयवाला जो मनुष्य जटाधारी शिव के परम-पवित्र इस स्तोत्र को प्रतिदिन परमभक्तिपूर्वक पढ़ता है, वह इस लोक में अत्यधिक धन आयुवाला, पुत्रों वाला व यशस्वी होता है तथा शिवलोक में शिव के समान होता है।

महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः ।
अघोरान्नापरो मन्त्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम्।।35।।

भावार्थः- महेश्वर से बढ़कर और कोई देवता नहीं है, महिम्न से बढ़कर और कोई स्तुति नहीं है, अघोर मन्त्र से बढ़कर और कोई मन्त्र नहीं है, गुरु से बढ़कर और कोई तत्त्व नहीं है।

दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः।
महिम्नः स्तवपाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्।।36।।

भावार्थः- दीक्षा लेना, दान, तप, तीर्थ, ज्ञान, तथा यज्ञ आदि क्रियाएँ 'महिम्नः स्तोत्र' के पाठ की सोलही कला के भी बराबर नहीं हैं।

कुसुमदशननामा सर्वगन्धर्वराजः
शिशुशशधरमौलेर्देवदेवस्य दासः।
स खलु निजमहिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषा
त्स्तवनमिदमकार्षी हिव्यदिव्यं महिम्नः।।37।।

भावार्थः- मस्तक पर बाल चन्द्रमा को धारण करने वाले देवों के देव शङ्कर का एक भक्त पुष्पदन्त नाम वाला गन्धर्यों का राजा था, वह इन्हीं शङ्कर जी के क्रोध से ही अपनी महिमा से गिर गया। फिर अपने दिव्य पद की प्राप्ति के लिए उसने ही, शिव भगवान् की महिमा के इस परमदिव्य स्तोत्र की रचना की।

सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुं
पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्यचेताः।
व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः
स्तवनमिदममोघं पुष्पदन्तप्रणीतम्।। 38 ।।

www.anipdf.com

भावार्थः- पुष्पदन्त द्वारा बनाये हुए, निष्फल न होने वाले, बड़े-बडे देवताओं और मुनियों द्वारा पूजनीय, स्वर्ग और मोक्ष के एक मात्र उपाय इस स्तोत्र को यदि मनुष्य हाथ जोड़कर तथा एकाग्रचित्त होकर पढ़ता है तो वह किन्नरों द्वारा प्रशंसा प्राप्त करता हुआ शिव जी के पास जाता है।

श्रीपुष्पदन्त – मुखपङ्कज-निर्गतेन
स्तोत्रेण किल्विषहरेण हरप्रियेण।
कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन
सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः।।39।।

भावार्थः- श्रीपुष्पदन्त के मुखकमल से निकले हुए निखिल पापों का नाश करने वाले शिवजी के प्रिय इस स्तोत्र को कण्ठस्थ कर एकाग्रचित्त हो पाठ करने से भूतनाथ महेशजी अत्यन्त प्रसन्न होते हैं।

इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छङ्करपादयोः।
अर्पिता तन देवेशः प्रीयतां मे सदाशिवः।।40।।

भावार्थः- यह शब्दमयी पूजा श्री शङ्कर भगवान् के चरणों में समर्पित है। इससे सदा कल्याण करने वाले महादेव मुझ पर प्रसन्न हों।

www.anipdf.com